भगवत् कृपा

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली द्विमासिक सत्संग पत्रिका

वर्ष 25 अंक : 2 | शुक्रवार, 15.3. 2002 | वार्षिक चंदा : 50.00

हमारे लिए प.पू. काकाजी का रक्तरंजित परिश्रम और.... हमारा उनसे सुलूक !

हम सब कितने सौभाग्यशाली हैं कि हमारे जीवनकाल दौरान–
भगवान स्वामिनारायण एवं मूल अक्षरमूर्ति गुणातीतानंदस्वामी की द्विशताब्दी,
ब्रह्मस्वरूप स्वामिश्री शास्त्रीजी महाराज एवं ब्रह्मस्वरूप गुरुहरि योगीजी महाराज की शताब्दी,
स्वामिनारायण महामंत्र द्विशताब्दी,
प्रगट ब्रह्मस्वरूप प.पू. पप्पाजी एवं ब्रह्मस्वरूप प.पू. काकाजी का अमृतपर्व,
प्रगट ब्रह्मस्वरूप प.पू. पप्पाजी का आराधना पर्व,
प्रगट ब्रह्मस्वरूप प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी एवं प्रगट ब्रह्मस्वरूप प.पू. साहेब की हीरकजयंती–
जैसे मंगलकारी अवसर आए और....... हमने मनाएं ! कितनी चिरंजीव स्मृतियाँ हमारी चित्तपट्टी पर छप गई !
और....... गुणातीत स्वरूपों की एक ही चाहना है कि–
भगवान और संत की मूर्ति में अखंड रह कर, अक्षरधाम के सुख, शांति, आनंद के हम भोक्ता बनें !
अब आई है–'प.पू. काकाजी को हुए साक्षात्कार की स्वर्णजयंती !'
3 फरवरी 1952 की वो मंगल घड़ी.......
जब गुरुहरि योगीजी महाराज ने अत्यंत राजी होकर
38 साल की अल्प आयु के
अपने इस लाड़ले के हाथों आध्यात्मिक धर्मधुरा की मशाल
अनोखे प्रकार की निश्चिंतता व भरोसे से सौंप दी.......
प.पू. काकाजी को साक्षात्कार हुआ और...एक नए युग का प्रारंभ हुआ.......
इस 'ज्ञानसमाधि' के पश्चात्–
'गुरुहरि योगीजी महाराज कोई सामान्य विभूति नहीं,
बल्कि अक्षरधाम में विराजमान श्रीजी महाराज का ही साक्षात् स्वरूप
हमारे साथ, हमारे जैसा ही बन कर के धरती पर मानवस्वरूप में विचर रहा है...
योगी भगवान है, योगी भगवान है, इसे पहचान लो...'
यह बिगुल दिगंत में प.पू. काकाजी ने बजाया करा !
मानो एक नए स्वर्ण युग का प्रारंभ हुआ....... आध्यात्मिक इतिहास में एक नई क्रांति आई

और
उनके अनथक् परिश्रम के फलस्वरूप आज संतों, युवकों, बहनों, गृहस्थों का चार पंखुड़ियों वाला
दिव्य गुणातीत समाज पल्लवित हो उठा है-ब्रह्मकिल्लोल कर रहा है.......
'गुणातीत समाज के हर केन्द्र की नींव में प.पू. काकाजी समाए हैं–'
इस नक्कर वास्तविकता से मुँह नहीं मोड़ा जा सकता; कई पुराने जोगी इस इतिहास के साक्षी हैं।
प.पू. काकाजी की महिमा किन शब्दों में लिख पाएंगे ?
क्योंकि– ऐसी विभूतियों के जीवन को निहारने इन्द्रियां-अंतःकरण के भावों से ऊपर उठ कर
एक अलग चक्षु, एक अलग ही दृष्टि चाहिए।
प.पू. काकाजी स्वयं कहते– 'तमे अंतरनी आंखें ओळखो...'
प.पू. काकाजी को जिन्होंने यूं निहारा है और प्रारंभ से गुणातीत समाज के सारे इतिहास के साक्षी रहे हैं,
इन्होंने बहुत ही स्पष्ट शब्दों में प.पू. काकाजी की 'दर्दे उल्फ़त' का दर्शन कराया है, जिसे सुनकर हमारे रोंगटे खड़े हो जाएं !
हमारा भला करने-हमारे चैतन्य के विकास के लिए प.पू. काकाजी निरंतर लगे ही रहे-लगे ही रहे.......
खून का एक-एक कतरा बहा कर उन्होंने हमारा पालन पोषण किया....... हमें भगवान दिए.......
हमारे लिए क्या-क्या और कितना कुछ सहा ?
कितनी कसनीयाँ, आक्षेप, अपमान सहे, बुरे दिखाई पड़े ?
पर बदले में हमने उन्हें क्या दिया ? उनके साथ कैसा सुलूक किया ?
हमारे मन-इन्द्रियां-अंतःकरण की दीवारों को जब उन्होंने तोड़ने की कोशिश करी, मन के संकल्प तोड़े,
पंचविषयों के रमणीय रागों पर– वृत्तियों पर चोट लगाई.......
तो हमने उन्हें उलाहने देने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी, बल्कि उनकी बात को उल्टा ले लिया.......
तबभी प.पू. काकाजी तो 'योगी' के प्रति अपनी पराभक्ति अदा करने हँसते मुँह
अल्प संबंध वालों में 'योगी' को ही देख कर एक सच्चे सेवक की अदा से लगे रहे.......
स्पष्ट शब्दों में कहा जाए तो हमें निभाते ही रहे.......
सभी चीज़ों का खूब ख्याल होते हुए भी कि–
'फलां सेवक मेरे यह टोकने पर– सूचन करने पर बुरा मान लेता है,
मेरी कही बात का अपने मन से उल्टा ही अर्थ निकाल कर मेरी अवगणना करने लगता है,
अपनी अच्छाईपेशी दिखाने, अपने स्वभावों का पोषण करने मुझे बदनाम करने लग पड़ता है'
तब भी वे तो प्रकाश फैंकते ही रहे....... फैंकते ही रहे....... यही तो थी 'योगी' के प्रति उनकी गुरुभक्ति-पराभक्ति !
तो आईये, दर्दे उल्फ़त के निम्न उद्गार पढ़ें और अंतर्दृष्टि को पाएं कि हम कहां-कहां गल्ती खा गए हैं-खा रहे हैं।

★ ★ ★

'.......**मैं** तुम्हें यह इसलिए कह रहा हूँ कि सत्संग में ये सब चीज़ें दस-पंद्रह-बीस वर्ष पर बनती ही रहती हैं।
उसे अब हम कोई टीका-चर्चा के तौर पर देखते नहीं हैं,
क्योंकि–
भक्तों की एक पूरी कसौटी के लिएङ्कउनकी आध्यात्मिक प्रगति के लिए
और
जीवों की उत्क्रांति के लिए का यह एक सारा प्रोसेस है।
पुरानी पीढ़ी के सत्संगियों को इन सारी बातों की खबर है। तुम्हें कहने से उसका कोई फायदा नहीं है।
परंतु,
तुम्हारी कल्पना में नहीं आए, हमने अभी जो सोचा भी नहीं हो या जो हम सोच भी नहीं सकते-
ऐसा उस समय बना था **और आगे भी बनने वाला है**।
परंतु, ऐसे प्रसंगों से हमारा मन डांवाडोल ना हो जाए, हमारी मति स्थिर रहे और हमारा जीवन स्वरूपलक्षी बने
इसलिए मैं खास दादुकाका के जीवन के प्रसंगों की मिसाल लेकर तुम्हें यह बात करता हूँ।

हम में से कई जानते नहीं होंगे कि **शास्त्रीजी महाराज के अंतर्धान होने के बाद योगीबापा की ख्याति**
और
उनके नाम का भजन तथा प्रार्थना करने की लगन और भावना
अक्षरपुरुषोत्तम बोचासणवासी संस्था में **दिन-प्रति दिन बढ़ती रही थी, उसका केन्द्र स्थान थे–दादुकाका।**
जैसे कि आपको बात करी
दादुकाका ने नाणावटी सेठ के यहां नौकरी करी, फिर उन्होंने नौकरी छोड़ दी और व्यापार किया।
उस व्यापार में उन्होंने लाखों रुपये कमाए और खर्चे भी !
.... साक्षात्कार के अनुभव के बाद उन्हें उपशम जैसा हो गया था।
बा के मुख से हमने कई बार सुना है कि वे मन की बात जान लेते थे।
सामने आया हुआ व्यक्ति मन में जो सोच रहा हो, वह दादुकाका फट् से बोल देते।
कोई भी व्यक्ति कठिनाई की कुछ बात करने या कुछ मदद मांगने के लिए आए,
तो वे जेब में हाथ डालकर–फिर चाहे वह पाँच रुपये की नोट हो या सौ रुपये की नोट हो,
जो भी निकले वह यूं मुट्ठी भर कर दे देते।
उनके कपड़े–अच्छे-अच्छे सूट–पेन्ट भी वे हरिभक्तों को बाँट देते।
यूं कहें कि इतना अधिक अनियंत्रित रूप से–बेफाम तरीके से वे जीते कि
थोड़े समय में ही उन्होंने लाखों रुपये पानी की भाँति खर्च कर दिए...
ऐसे हालात में पप्पाजी का 'एग्री ओरियन्ट इन्डस्ट्रीज़' में डायरेक्टर के रूप में दाखिल होना हुआ।
यह बात–
'प्रत्यक्षनुं युगकार्य' किताब में भी लिखी हुई है
और
प.पू. पप्पाजी व बा के मुख से भी हमने उनके जीवन के प्रसंगों में सुनी है।
पप्पाजी ने खुद जाकर योगीबापा को प्रश्न पूछा कि–
'आप साक्षात् भगवान का स्वरूप हो, फिर भी आप चलते हो तो–
एक कदम आगे (ज़मीन पर) रखने के बाद ही दूसरा कदम धीरज और सावधानी से उठाते हो
जिससे कि आपके शरीर का संतुलन ज़रा भी बिगड़ न जाए।
जबकि हमारे दादुभाई तो यहां से उठते हैं, तो वहाँ छलांग लगाते हैं और वहां से उठते हैं तो वहाँ छलांग मारते हैं।
यह कोई भागवती स्थिति का लक्षण कहा जाए क्या ?
यदि दादुभाई और आप दोनों की तुलना करें, तो आपका आध्यात्मिक बड़प्पन खूब ऊँचा है
और
आप साक्षात् भगवान का स्वरूप हो; दादुभाई तो आपका एक भक्त है और आपका दिया हुआ ऐश्वर्य और दर्शन पाया है।
आप तो इतने स्थिर हो, शांत हो और संतुलन संभाल कर इस लोक में रहे हो,
फिर आपका भक्त और मेरा भाई इतना अधिक उतावला और उग्र क्यों दिखाई पड़ता है ?'
पप्पाजी ने इस बात का समाधान योगीबापा से निजी रूप से मांगा।
'यह स्थिति बहुत लम्बे समय तक रहेगी नहीं; तुम धीरज रखो, थोड़े समय में दादुभाई शांत हो जाएंगे'
यूं योगीबापा ने उन्हें भरोसा रहे ऐसा जवाब दिया।
पूज्य पप्पाजी को भी बापा के इस वचन की प्रतीति हुई, जब थोड़े समय में दादुकाका में स्थिरता लौटी
और
सामान्य मनुष्य- सद्गृहस्थ की तरह वे वर्तने लगे।
उन दिनों पू. काकाजी ज्यादातर ताड़देव ही रहते थे, सो कई लीलाचरित्र उन्होंने ताड़देव में रहते हुए किए......
.......और
ताड़देव में उनके तीन मुख्य भक्त थे और वे भी स्त्री पात्र !

सबसे पहले उनकी माताजी-जिनका नाम था–दीवाली बा, फिर उनकी बहन-कमलाबा (मणीबेन) तथा तीसरे– ये सोनाबा।
यानि कि– दादुभाई को मानो पहले से ही स्त्रियों के प्रति ही पक्षपात हो और स्त्री भक्तों का उन्होंने टोला जमाया हुआ हो ऐसी उनकी सत्संग में चर्चा रही;
क्योंकि– उनके सिवा मुच्छड़–जो पुरुष थे उन्हें दादुकाका की प्रतिभा के सामने अपना तेजोवध होता हो ऐसा लगता था।
सो, वे दादुकाका की आध्यात्मिक ऊँचाई का तुरंत स्वीकार नहीं करते थे.......
.......'दादुभाई में शास्त्रीजी महाराज ने प्रवेश किया है और भगवान ने उन्हें दर्शन दिए हैं'–
इस बात का दृढ़ ठहराव यदि हुआ हो तो इन तीन स्त्रियों को हुआ था।
एक उनकी माता, दूसरी उनकी बहन और तीसरी उनकी आदर्श भक्त–यूं कहा जाए कि सोनाबा दादुकाका की एक आदर्श भक्त थीं।
बाद में दादुकाका ने उन्हें अपने साथीदार के रूप में स्वीकारा।
काकाजी और बा का संबंध भी बहुत अलग प्रकार का है।
इस संबंध की शुरुआत यूं हुई कि डॉ. नाथाभाई (प.पू. काकाजी के पिताजी)–वे शास्त्रीजी महाराज के आश्रित थे
और
पू. सोनाबा भी शास्त्रीजी महाराज की आश्रित थे। यूं दोनों एक ही गुरु के शिष्य हुए !
सो, डॉ. नाथाभाई के लड़के को सोनाबा अपने लड़के जैसा मानतीं थीं.......
.......इसलिए दादुकाका, शास्त्रीजी महाराज और डॉ. नाथाभाई के संबंध से सोनाबा को मिलने के लिए कभी-कभार आते थे।
तब बा उन्हें कहते कि–बैठो दादुभाई, तुम्हें वचनामृत समझाऊँ।
पर, उस समय दादुकाका को वचनामृत में बहुत दिलचस्पी नहीं थी। उन्हें उनके धंधे-व्यापार की लगन थी।
सिर्फ 'कैसे हो' ? यूं हालचाल पूछने करने के लिए कभी-कभी आते
और
सोनाबा को बुरा न लगे सो बैठते-करते और जैसे बा आज हमें वचनामृत समझाती हैं,
वैसे उस समय दादुकाका को वचनामृत समझाती थीं।
समय ने करवट ली–दादुकाका कथा करते और बा नीचे बैठ कर कथा सुनने लगीं ऐसा समय आया।
ताड़देव का वह समय स्वर्णयुग था–यूं कहें तो ठीक रहेगा।
उस समय दादुकाका इतना अधिक बोलते-इतना अधिक बोलते और ऐसा बोलते कि किसी को समझ नहीं आता था।
सभी सिर्फ 'धन्य है–धन्य है' कहते, पर साथ-साथ सभी ने मान भी लिया कि ये वो पहले वाले दादुभाई नहीं हैं।
ये दादुकाका में कोई दूसरा प्रवेश कर गया है और वह यह सब बोल रहा है।
इसलिए उनमें रह कर शास्त्रीजी महाराज बोल रहे हैं ऐसा मान कर भक्त लोग उनकी पूजा और उपासना करते हो गए !
उसमें से – ये योगीजी महाराज का एक छोटा स्वरूप हैं, यूं सत्संग में उनकी छवि निखर आई।

दादुकाका की इस प्रतिभा का उपयोग योगीबापा ने बहुत अच्छा किया।
उन्होंने देखा कि यह युवक है, तेजस्वी है, उत्साही है।
इसे जगत की–किसी की कुछ परवाह नहीं है और इसे जो काम सौपूँगा वह बेहिचक करेगा–
इस बात का विश्वास योगीबापा को आया।
सो योगीबापा ने अपने एक बड़े बुलडोज़र के रूप में उनका अधिक से अधिक और खूब अच्छा-सा उपयोग किया।
हम यूं कहें कि– काकाजी में पड़ी शक्ति को बापा ने पहचाना
और
इसका अच्छे से अच्छा उपयोग योगीबापा ने
अक्षरपुरुषोत्तम की संस्था का विकास करने में
एवं
उपासना–गुरुभक्ति के ज्ञान को और बेहतरीन तरीके से प्रस्थापित करने में किया।

आप सभी जानते हो कि **विद्यानगर के युवकों की युवक प्रवृत्ति** प.पू. जशभाई साहेब के नेतृत्त्व में चलती थी।

उसकी भी कमान योगीबापा ने दादुकाका को दी।
यह प्रसंग हमारी ब्रह्मनिर्झर में, दोनों अनुपम–साहेब और संतों के दोनों भाग में आ गया है।
तब हम सभी हाज़िर थे।
हम कालेज में पढ़ते थे, तो विद्यानगर से साईकिल लेकर
हम सभी युवक योगी बापा के पास आणंद मंदिर में बापा के दर्शन के लिए जाते।
देर रात तक - बापा सोने नहीं जाते तब तक
बापा के आस-पास उनकी सेवा में, उनकी बातें सुनने में, संतों के साथ गोष्ठि करने में युवक अपना समय व्यतीत करते।
उस समय विद्यानगर में भी एक विशिष्ट कार्य करने का संकल्प योगीबापा का था
और
वह कार्य प.पू. जशभाई साहेब द्वारा हो और उन्हें दादुकाका का नेतृत्व मिले ऐसे सारे संजोग भी योगीबापा ने बना दिये.......

'.......हमारी सारी जो उपासना है और मूर्ति की हम जो पूजा करते हैं,
उसके सारे सिद्धांत को रखते हुए हम **प्रगट की उपासना** का अनुसरण करते हैं।
क्योंकि इस बात का पहला अंक-'एक' निकल ना जाए और यदि एक निकल गया तो जुड़े हुए शून्य की कोई कीमत रहती नहीं।'
यह बात **बापा हमें समझाते.......** और **इस बात की दृढ़ नींव-वह सिखाई हमें–दादुकाका ने !**
प्रगट की उपासना की बात उन्होंने हमें सिखाई।
तुम्हें याद हो तो पोषी पूर्णिमा की हमारी एक शिविर में जब हम
सीधा शास्त्रीजी महाराज या योगीजी महाराज का श्लोक बोले थे, तब उन्होंने हमें टोका था.......
.......दादुकाका ने उनके प्रवचनों में कोई सिद्धांतिक बात अस्पष्ट रहने नहीं दी है
और
कभी भी कोई सिद्धांतिक भंग होता हो, तो वहां रोक कर, तुरंत ही चलती सभा में–
उनकी बारी हो या ना हो, बड़े बैठे हों–किसी को बुरा लगे या किसी को अच्छा लगे–
तुरंत ही **उन्हें जो कुछ भी कहना हो, स्पष्ट रूप से कहने की यदि किसी में भी हिम्मत हो,**
तो हमारे सत्संग में वो दादुकाका के पास थी यूं कहें तो इसमें कुछ गलत नहीं है।

प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी का 50वाँ जन्म दिन जब आणंद में मनाया, तब दादुकाका ने जो अंग्रेजी में प्रवचन किया था–
उस बारे मैं यह कहूँगा कि हमारे सत्संग में वह दादुकाका ही कर सकते हैं,
उनके सिवा दूसरा कोई ऐसा प्रवचन करने की हिम्मत नहीं करेगा।
इसका अर्थ यह नहीं कि दादुकाका की तुलना में मैं पप्पाजी को या हरिप्रसादस्वामिजी को छोटा कह रहा हूँ।
लेकिन उनका जो कहने का तरीका और उनकी जो हिम्मत कि–
50 हजार जनों की सभा में भी उन्हें जो ठीक लगे वह वे स्पष्ट रूप से कहते।
कोई सेवा नहीं करे, कोई आएगा या कोई चला जाएगा
ऐसी किसी भी प्रकार की मोहब्बत रख कर लोगों को रिझाने भाषण करना दादुकाका को आता नहीं था।
मैंने उन्हें कई सारी सभाओं में सुना है और ऐसा कहने की हिम्मत वाले वे थे,
तभी तो उम्र में उनसे बड़े एवं शास्त्रीजी महाराज की उम्र के बराबर के समकालीन संतों और हरिभक्तों की हाज़िरी में
32 वर्ष का यह युवक सभा में योगीजी महाराज के माहात्म्य की बातें करें,
तब सभा में बैठे सभी को होता कि दादुभाई मुँह संभाल कर बात नहीं करते हैं।
ऐसा जो कह सकता है, वो हरिप्रसादस्वामिजी की पचासवीं जयंती की सभा में
जिसे कहा जाए कि बिना मुँह संभाले खुली बात कह सकता है।
हालाँकि उनका वह प्रवचन खूब दुःखद प्रवचन था।
जैसे-जैसे हम हमारी आध्यात्मिक कक्षा में आगे बढ़ते जाएंगे और उन शब्दों की गहराई को समझेंगे,
तब हमें ख्याल आएगा कि हम कौन-सी श्रेणी का सत्संग कर रहे हैं।

बहुत दर्द की बात है–

आज काकाजी को हम जब याद कर रहे हैं, तब साथ-साथ ऐसी कई-कितनी दुःख की बातें भी
बिना याद करे याद आ जाती हैं–
हमारी नज़र के समक्ष उभर आती हैं।
कहने का तात्पर्य यह है कि काकाजी का व्यक्तित्व ऐसा था
जो कि किसी के भी ढकने से ढकेगा नहीं, किसी के दबा देने से दबेगा नहीं।
इसके बाद से तो यूं कहा जाए कि काकाजी का उपयोग–
जैसे कोई बड़ा दरवाजा-पुराने ज़माने में किसी गढ़ का दरवाजा तोड़ना हो, तो हाथी उसे सिर मार कर तोड़ता;
लेकिन उस दरवाजे में बड़े-बड़े नोंक वाली कीलें लगी रहती,
जिससे कि कोई भी उसे तोड़ने या धक्का लगाने जाए तो उसे वे कीलें लगती।
सो, युद्ध रचना के हिसाब से एक बड़ा ऊँट आड़ा खड़ा करते थे,
और
उसकी दूसरी ओर से हाथी अपना सिर उस ऊँट के पेट में मारे, ताकि ऊँट के पेट में सारी कीलें घुस जाएं
पर हाथी के सिर में कील लगे नहीं, फिर भी सीधा जोर दरवाजे के ऊपर लगे
जिससे कि दरवाजा टूट जाने पर सारा लश्कर उस नगर के अंदर घुस कर धावा बोले।
बहुत पुराने जमाने में जब तलवार और भालों से तथा घोड़े पर बैठ कर युद्ध करते थे;
तब ऊँट का इस प्रकार उपयोग होता था।
यूं कहा जाए कि दादुकाका का उपयोग हमारे सत्संग में एक ऊँट की भाँति हुआ।
माफ करना मैं ऐसे शब्दों में बोल रहा हूँ, लेकिन इससे मैं दादुकाका की प्रतिभा को तनिक भी धुंधली करना नहीं चाहता।
दरअसल मैं यह कहना चाहता हूँ कि **दादुकाका ने हम सभी को सुखी करने के लिए खुद का बलिदान दे दिया है।**
दरवाजा टूटने के बाद तो वह नगर जीत लिया जाता है और जीतने का आनंद कई सैनिक लेते हैं,
लेकिन वह दरवाजा तोड़ने के लिए जिसने खुद का जीवन याहोम कर दिया है, वह ऊँट तो मर ही जाता है।
महावत थपथपाता है उस हाथी को जिसने दरवाजा तोड़ा
और
लोग जय-जयकार बुलाते हैं उस राजा का–जिसके सैनिक नगर में घुस गए।
लेकिन, वह ऊँट जो कि–दरवाजा तोड़ने का कारणभूत बना
और
मृत होकर गिर गया,
वह हमेशा के लिए भुला दिया गया !
ठीक इसी प्रकार **दादुकाका ने अपने समग्र अस्तित्व का, अपनी समग्र जात का–**
यूं कहें कि अपने कुटुंब और परिवार का **हमारे लिए यूं पूरा समर्पण कर दिया**
और
वे बिसरे गए, गुम हो गए–यूं कहें तो चले।
काकाजी को ऊँट की उपमा मैं इसी दृष्टि से दे रहा हूँ।
बापा ने एक साधन के रूप में उनका उपयोग किया और फिर हमें भी ऐसी एक आदत-सी पड़ गई।
और....... बाद के सत्संग समाज ने भी उनका एक साधन के रूप में उपयोग किया
और
उसमें से चार पंखुड़ी वाली अभी की हमारी संस्था का विकास हुआ है।
काकाजी ने अपना समग्र जीवन ये चार पंखुड़ी के सत्संग का विकास करने में याहोम कर दिया है।
उन्होंने न तो कुछ अपना रखा, न ही कुछ पराया गिना। जहां भी गए वहां अपना समझ कर उसमें समा गए
और

अपना जो कुछ भी था वह सर्वस्व देकर, पोषण करके
उन संस्थाओं और व्यक्तियों का–उनके व्यक्तित्व का विकास होने दिया–आगे बढ़ने दिया।
यह बात एक महान पुरुष की है।
हम दादुकाका को भगवान ना कहें तो चलेगा,
लेकिन वे एक ऐसे व्यक्ति विशेष हैं कि जो सामान्य व्यक्ति नहीं कर सकता.......

.......दादुकाका के लिए मैं यूं कहूँ कि–
वे जो बात करते थे वह हमारे सत्संग समाज से दस-पंद्रह, बीस-पच्चीस वर्ष आगे की बात करते थे।
हम सभी इतने छोटे-छोटे बच्चे थे और उनकी सभा में बैठ कर बातें सुनते थे.......
.......उन्हें जो कहना था वह वे कहते ही रहे।
सुनने वाले जो बैठे हैं उनकी पात्रता कितनी है उसका माप उन्होंने कभी निकाला नहीं है।
यह एक बहुत समझने जैसी बात है।
जब कोई भी वक्ता बात करता है,
तब वह उसके श्रोता की पात्रता का माप निकाल लेता है कि–
मैं जो कह रहा हूँ उसमें से यह कितना समझ पाएगा ?
दादुकाका एक ऐसे पुरुष थे कि सामने बैठा व्यक्ति कितना समझता है उसका माप निकाले बिना
उन्हें जो कहना था, वह वे सतत् कहते रहते
और
ये बातें उन्होंने मणीबेन को कही हैं, ये बातें उन्होंने दीवाली बा को कही हैं,
ये बातें उन्होंने सोनाबा को कही हैं, ये बातें उन्होंने जेठालाल भगत को कही हैं, ये बातें उन्होंने मणीबेन-होटेल को भी कही हैं
और
उन सभी ने 'धन्य हैं, धन्य हैं, धन्य हैं' कह कर 'वाह-वाह' एवं 'जय-जयकार' किया है।
यह बात हमने बा के पास से, पप्पाजी के पास से कई बार सुनी है।
यूं काकाजी का व्यक्तित्व इतना अत्यधिक जबरदस्त था।
और
हमारे यहां ज्यादातर जो गाई गई है और चर्चित जो बात है–'चमत्कार प्रकरण' की, वह भी दादुकाका ने खूब चलाया था.......

योगीबापा ने स्वयं, अपने हाथ से स्वयं सर्जी संस्था के–अक्षरपुरुषोत्तम बोचासणवासी संस्था के
उनकी हाज़िरी में दो भाग कर दिए। उन्हें मानते भक्तों के दो भाग कर डाले।
यह कोई छोटी-सी बात नहीं थी।
हम उसके कई कारण दे देते हैं कि–
'उस कारण बना, इसलिए बना–
ये सब व्यक्ति निमित्त बने या इस कारण बना।'
कहने को हमारे पास कई कारण हैं
और
हमारे बाद जो लोग इतिहास लिखेंगे, उनकी जैसी दृष्टि होगी वैसे वे इन सभी प्रसंगों को प्रस्तुत कर देंगे।
सच्ची हक़ीकत का रहस्य तो कोई ही अभ्यासी पाएगा
या
जो इतनी आध्यात्मिक ऊँचाई को पहुँचा होगा–वही इस बात की गहराई को पाएगा।

बाकी आजकल इतिहास भी ऐसा लिखा जाता है कि–

यूं कहें कि इतिहासकारों को हम मुआवज़ा देकर लिखने के लिए बिठा दें, तो तुम्हें जैसे लिखवाना हो वो वैसा लिख देगा और
वही पुस्तक छप जाएगी, वही पुस्तक पढ़ी जाएगी और भावी पीढ़ी को उसके सिवा की अन्य कोई जानकारी मिलेगी ही नहीं।
ऐसा ब्रिटिश सरकार हमें विरासत में दे गई है.......

.......आपको शायद पता नहीं होगा, लेकिन–
शास्त्रीजी महाराज और योगीजी महाराज के साथ के दादुकाका के जीवन के प्रसंग
अक्षरपुरुषोत्तम बोचासणवासी संस्था ने मिटा डाले।
इससे मैं संस्था की कोई टीका नहीं करता, लेकिन एक सत्य और स्पष्ट हक़ीकत आपके समक्ष व्यक्त कर रहा हूँ
और
आजकल हम भी ऐसा ही कर रहे हैं।
शास्त्रीजी महाराज का जो पुराना जीवनचरित्र–**हर्षदभाई दवे** ने लिखा है
उसमें शास्त्रीजी महाराज के साथ के दादुकाका एवं दादुकाका के पिताश्री डॉ. नाथाभाई पटेल के प्रसंग
खूब अच्छी तरह रजू किए हैं.......
क्योंकि तब हर्षदभाई की दादुकाका से खूब अच्छी पटती थी।
हर्षदभाई को अन्य कोई नौकरी नहीं थी;
सो, दादुकाका की ऐग्री ओरियेन्ट इन्डस्ट्रीज़ में से उन्हें नियमित आमदनी दी जाती थी और वे केवल लेखन कार्य करते थे.......
वो हर्षदभाई दवे ने शास्त्रीजी महाराज का जीवनचरित्र लिखा !
इससे मैं शास्त्रीजी महाराज के विषय में, दादुकाका के विषय में या हर्षदभाई के विषय में–
किसी के विषय में, कुछ भी कहना नहीं चाहता।
सिर्फ, जो इतिहास है उसे सत्यस्वरूप में प्रस्तुत कर रहा हूँ।
जब दादुकाका को अक्षरपुरुषोत्तम बोचासणवासी संस्था ने विमुख किया
और
शास्त्रीजी महाराज का जो नया जीवनचरित्र उसी लेखक द्वारा लिखने में आया
उसमें दादुभाई का नाम भूल से भी कहीं आ ना जाए,
ऐसी अत्यधिक सावधानी रख कर पुराने सभी प्रसंग उसमें से निकाल दिए गए।
शास्त्रीजी महाराज के जीवनचरित्र की पुरानी आवृत्ति अभी ढूँढने पर भी कहीं मिलती नहीं है।
जिन-जिन पुराने हरिभक्तों के पास वह आवृत्ति थी–वह इकट्ठी कर ली गई और उसका निकाल कर दिया गया।
बहुत पुराने हरिभक्त–जो हमारे पक्ष में थे उनके पास वो पुरानी प्रतियाँ संभली हुई हैं और उसमें पुराने प्रसंग संभले हुए हैं।
अब यह नई युवा पीढ़ी अक्षरपुरुषोत्तम बोचासणवासी संस्था में से लाकर शास्त्रीजी महाराज का जो जीवनचरित्र पढ़ेगा,
तो दादुकाका तो भुला ही दिए जाएंगे ना ? क्योंकि आज दादुकाका है नहीं।
दादुकाका हाज़िर थे, तब सद्भाग्य से दादुकाका स्वयं अपनी महिमा कहते कि मैं ऐसा व्यक्ति हूँ, अरे ! मुझे पहचानो।
अब आज वे तो हैं नहीं और **हम भी इतनी हिम्मत से दादुकाका की आज बात भी करते नहीं हैं।**
तो, यह युवा पीढ़ी–जिसने अक्षरपुरुषोत्तम बोचासणवासी संस्था द्वारा प्रकाशित इतिहास पढ़ा होगा कि–
शास्त्रीजी महाराज कौन थे, योगीजी महाराज कौन थे और उन्होंने कैसे-कैसे विरल कार्य करे
और
कैसे-कैसे हरिभक्तों ने उन्हें आजीवन साथ दिया ? उसमें नाम तो कई आएंगे, लेकिन उसमें दादुभाई का नाम नहीं होगा !
और तब हम यूं कहेंगे कि यह इतिहास कलंकित इतिहास है। वह निष्पक्षरूप से लिखा नहीं गया।

हम भी तो आजकल यही प्रवृत्ति कर रहे हैं ना ? हम भी हमारे प्रकाशनों में एक तरफा ढोल बजा रहे हैं।
'सर्वदेशीय'–जिसे यूं कहें कि–
हमारे गुणातीत समाज की जो विभूतियां हैं,
जिन्होंने सारी संस्कृति का उत्थान करने में उनके जीवन की आहूति दी है,

उन्हें हम समतापूर्वक न्याय नहीं देते; क्योंकि हम एकपक्षीय–एक संस्था में बैठे हैं।

ऐसी अनेक संस्थाएं हैं कि जिन्हें खड़ी करने में दादुकाका ने उनका जीवन पूरा कर दिया है।
सोखड़ा हरिधाम में–हरिप्रसादस्वामिजी की संस्था, **सांकरदा** में अक्षरविहारीस्वामिजी का अक्षरपुरुषोत्तम सत्संग केन्द्र,
दिल्ली में योगी डिवाईन सोसाईटी–मुकुंदजीवनस्वामी की संस्था।
इससे अधिक **लुधियाना** में उत्तमचरणस्वामिजी की संस्था,
पवई में आज के दिन यूं कहें कि महेन्द्र बापु, रमेशभाई सोनी....... भरतभाई के नेतृत्व में चलता ताड़देव का एक केन्द्र,
विद्यानगर में फिर दो, एक – गुणातीत ज्योत-**बहनों** की संस्था। दूसरा अनुपम मिशन-व्रतधारी **भाईयों** की संस्था।
ऐसी अनेक संस्थाओं में बंटा हुआ है–दादुकाका का व्यक्तित्व !
सभी टुकड़ों को इकट्ठा करें, तो भी एक दादुकाका बनेंगे नहीं,
क्योंकि इन सभी टुकड़ों में दादुकाका बंट गए हैं– याहोम हो गए हैं।
हर एक को उनकी निजी संस्था खड़ी करने में दादुकाका ने खुद साथ व सहयोग दिया है और आनंद महसूस किया है।

आप सोचो कि–
दादुकाका ने जब देह छोड़ी, तब उनका अग्निसंस्कार करने के लिए छः फुट की ऐसी जगह नहीं मिली कि
जहां उन्होंने अपने ममत्व से कोई स्थान खड़ा किया हो !
यह बात मैं तुम्हें इसलिए याद दिला रहा हूँ कि ऐसी बात जब मुक्तानंदस्वामी ने महाराज को करी कि–
'महाराज ! आप जैसे आप पधारे और कोई संस्था बना कर जाओगे नहीं, तो लोग आपको याद कैसे करेंगे ?'
व्यक्ति याद रहते हैं–उनकी संस्थाओं से, उनके चेलों-चेलियों के मंडल से और उनके रचे हुए ऐसे इतिहास से !
आज हम याद कैसे करेंगे ? जीवन चरित्रों से ही ना !
स्वामिनारायण भगवान का जीवनचरित्र पढ़ेंगे, तो हमें सारी जानकारी मिलेगी।
शास्त्रीजी महाराज का जीवनचरित्र पढ़ेंगे, तो हमें सारी जानकारी मिलेगी,
योगीजी महाराज का जीवनचरित्र पढ़ेंगे, तो हमें सारी जानकारी मिलेगी।
व्यक्ति को हम याद करते हैं एक संस्था के पार्श्व में और संस्था द्वारा रचे गए साहित्य से।
उसमें से कुछ भी दादुकाका के पास नहीं है।
सारी संस्थाएं खड़ी करने में उन्होंने उनका जीवन खत्म कर दिया.......

.......शास्त्रीजी महाराज के जीवनचरित्र में दादुकाका के साथ अन्याय हुआ वह तो हम देखते रहे,
उसके बाद संस्था द्वारा दी गई जानकारी से एक अंग्रेज लेखक ने एक दूसरी पुस्तक लिखी है,
जिसने सारे हिन्दुईज़म का अभ्यास किया है, स्वामिनारायण की सारी शाखाओं का परिचय लिखा है
और
उसमें हमारा परिचय इस प्रकार दिया है कि–
ये सब धोख़ेबाज़ लोग थे, विश्वासघाती लोग थे,
संस्था का व्यवहार उनके हाथ में था तब उन्होंने पैसे मार लिये
और फिर–
उसके बाद अपना एक अलग लेकर बैठे हैं वगैरह.......

.......यह सब कहने के दिन इसलिए आए हैं कि दादुकाका हमारे बीच में से चले गए हैं
और
उन्होंने हमें जो भव्य वारसा दिया है, उसे हम भूलते जा रहे हैं।
अच्छा है कि हम उनका जन्मदिन मनाने जितनी भक्ति तो दिखा रहे हैं।
मुझे नहीं कहना चाहिए, लेकिन अब समय आ गया है कि कई बातें कहे बिना छुटकारा नहीं है।
क्योंकि इन सभी बातों से यदि तुम अनजान रहो, तो इसमें सबसे ज्यादा नुकसान तुम्हें होने वाला है
और

सत्य एक ऐसी वस्तु है, जिसे तुम चाहे जितना ही ढकने का प्रयास करो, वह ढका नहीं रहेगा.......

.......सुहृद्भाव और एकता की बातें करने से वह होगा नहीं, व्यक्ति के अपने आचरण में होनी चाहिए
और
उसके लिए जीवन की आहुति दे देनी पड़े।
माहौल ही ऐसा होना चाहिए कि 'एकता रखो, सुहृद्भाव रखो'– इसके प्रवचन नहीं करने होते,
अपने आप सुहृद्भाव रहे और यह बात दादुकाका ठोक-ठोक कर कहते थे
और
इसलिए वे यह कहते कि हमें छलांग लगानी है।
हम एक ऐसी निम्न प्रकार की भक्ति में बैठे रहे हैं कि–
जहां से हमें ऊँचा उठना है, पर ऐसे ही उठा नहीं जाएगा; हमें छलाँग लगानी पड़ेगी.......
छलांग मारने पर सामने जाकर हम कहां गिरेंगे
और
सामने वाला हमें झेल लेगा क्या ?
और
स्थान देगा या स्वीकारेगा या नहीं वह एक अनिश्चिंतता की बात है
और
हम सभी इतने अधिक डरपोक स्वभाव के हैं कि
किसी भी प्रकार की अनिश्चिंतता स्वीकारने के लिए हम तैयार नहीं हैं।
कहीं न कहीं हमें शॅल्टर चाहिए–छप्पर चाहिए ही–आश्रय चाहिए ही
और
वहीं बैठ जाने की हमारी मनोवृत्ति है।
सो, ऐसे छप्पर जहां-जहां डाले गए हैं, वहां हम छाया ढूंढ कर बैठ गए हैं।
सत्य अलग ही होता रहा है।
इसलिए तो कहा गया है कि अक्षरधाम विहद और अपार है-अमाप है। उसके पार को कोई पा सकता नहीं है।
यह बात मुख्य है और जब तक हम हमारे जीवन में वह हॉसिल नहीं करेंगे, तब तक हमारी साधना अधूरी है.......

.......ऐसी जिसकी तैयारी हो उसे दादुकाका कहते कि–
'आ जाओ राजा ! छः घंटे में यदि तुम्हें यह ब्रह्मज्ञान न करा दूं तो मुझे कहना।'
लेकिन, मैं या तुम कोई छः घंटे की चेलेन्ज झेल कर बैठे नहीं।
सो, **हम किस कक्षा के भक्त हैं यह हमें पता है**.......

.......हमें अनुकूल आए ऐसा खा-पीकर तबियत से रहना,
हमारे सभी देहाभिमान और देहाध्यास का पोषण हो ऐसी भक्ति में रचे रहना,
धन्य हैं–धन्य हैं करना,
उत्सवों का आयोजन करना, पूजन करना, गुरु का पूजन करना–
यही मानो हमारा जीवन है और यही जीवन की पूर्णाहुति है !
और
'प्राप्ति वही पूर्णाहुति'–ऐसा सस्ता सूत्र लेकर हम बैठ गए हैं कि जिससे–
आगे का हम कुछ देख सकते नहीं हैं–कुछ विचार सकते नहीं हैं।
सच में पप्पाजी को, काकाजी को, साहेब और स्वामिजी को
योग्य स्वरूप में देखना हो, मिलना हो, अनुभव करना हो तो इस दृष्टि को पाने की जरूरत है
और

इसलिए तो हम वह कीर्तन गाते हैं न कि 'मने दृष्टि देने'–
वह 'दिव्यभाव की दृष्टि !'
फिर 'दिव्यभाव रखो' ऐसा कहना न पड़े। 'भगवान के जन्म और कर्म दिव्य हैं' यूं कहना न पड़े।
लेकिन, वह दिव्यता की अनुभूति तुम्हारी खुद की होनी चाहिए यह बहुत आवश्यक बात है।
जिसे खुद को ऐसा दिव्यभाव का अनुभव हुआ होगा उसे 'मनुष्यभाव नहीं लाना' ऐसा सूत्र सिखाना नहीं पड़ेगा।
हम सभी अधूरे हैं और इसलिए हमें बार-बार कहना पड़ता है कि–
'भई ! मनुष्यभाव लाना नहीं, भई ! अभाव लेना नहीं, भई ! खटपट या निंदा में पड़ना नहीं'।
क्योंकि हम सभी बिना अनुभूति के हैं, इसलिए हमें यह बाह्य ज्ञान सिखाना पड़ता है।
जिसे अनुभूति हो गई हो, उसे तो कल हरिप्रसादस्वामिजी ने उस पंक्ति को
इतनी कक्षा पर–ऊँची आध्यात्मिक कक्षा पर समझाया न कि
'मेरा नाविक तू, मेरी नैया तू, मेरी नदी तू, मेरा किनारा तू, मेरा समुद्र तू'।
ऐसा जिसे हो जाए उसने ब्रह्मज्ञान पा लिया कहा जाए और ऐसे ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति के लिए हमारी ये सारी उपासना है.......
.... सत्संग में ज्यादातर भक्त ऐसे हैं कि–
'महाराज आप मिले हो, सो बस धन्य हो गए हैं। फिर भला क्या संकल्प और क्या विकल्प ?'
लेकिन, मुक्तानंदस्वामी जैसे साधक भी हैं, जो मिनिट-मिनिट अंतर्दृष्टि करके जी रहे हैं।
वे साधन के बल से जी रहे हैं, ऐसा नहीं है।
अनेक प्रकार के आड़े ज्ञानी इसे फिर दूसरी बात पर ले जाएंगे कि भई ! इसमें तो साधन का प्रतिपादन आया,
भगवान तो हमें संबंध से मिले हैं और संबंध की प्राप्ति की तुम बात करो।
मैं संबंध की प्राप्ति की ही बात करता हूं।
लेकिन, जिससे संबंध हुआ है उसकी महिमा का ज्ञान यदि नहीं होगा, तो उस संबंध की कीमत रहती नहीं।
मेरा बाप कितना शक्तिशाली है और मेरे बाप का किया हुआ कितना होता है–
वह राजा के लड़के को खबर नहीं थी, सो वह मूली के लिए रोता था।
परंतु–
इस बात का पक्का भरोसा दादुकाका को था कि तुम्हारे बाप का ही किया हुआ होता है,
सो भरी सभा में वे छाती निकाल कर खड़े रहते और भले कैसी भी चैलेन्ज उनके जीवन समक्ष आकर खड़ी हो,
वे यूं कहते कि जीने का मजा तो उल्टे प्रवाह में ही आए।
मैंने उन्हें यह कहते सुना है कि–
'लोग हमारी वाह-वाह करते हों और हम जीएं वह कोई जीवन नहीं है।
पर, लोग हमारे सामने धूल उड़ाते हों, हमारी टीका करते हों, हमारी निंदा करते हों और तब भी हम मस्ती से चलते रहें,
उसे जीना कहा जाए और उसका नाम जीवन कहा जाए।'
'जीने की मजा तो उल्टे पूर में ही है'–यह सूत्र दादुकाका का है।

परंतु मुझ में और तुम में इतना दैवत् नहीं है कि हमारे कदम ऐसे पूर और तूफानों में स्थिर खड़े रह पाएं-टिक सकें।
जो गीत गाया जाता हो उसमें जुड़ जाने वाले हम लोग हैं और उसमें हमें मजा आता है।

हम दादुकाका के जन्मदिन पर उनसे प्रार्थना करें कि
भले जो भी गीत गाए जाते हैं और उसमें हम जुड़ गए हैं, उसकी हमें कोई दिक्कत नहीं है
और
उसमें हमें कोई दुःख भी नहीं है।
वह हमें इतना अधिक अच्छी तरह भा गया है कि–
इसके सिवा का कोई हमें अन्य जीवन बताए तो हम उन्हें कहेंगे कि
अरे ! तू मूर्ख है, हम कोई मूर्ख नहीं हैं।

लेकिन, इस गीत में भी जब कोई भवंडर आए, तब हमारी समता संभली रहे
और
जिस प्रवाह में हम जुड़े हुए हैं उस प्रवाह को दृढ़ता से चिपके रहें।
इतना भी यदि हम आपके जीवन में से सीखें, तो वह भी हमारे लिए बहुत है
और
हम समझेंगे कि हमारे जीवन का कार्य पूरा हुआ।
इतनी दृढ़ता प.पू. दादुकाका हम सभी को बख़्शें
और
मेरे अविवेक के लिए भी मुझे उदार दिल से माफ करें।
आप सभी भी मुझे मेरी क्षति के लिए मुझे उदार दिल से माफ करना।
ऐसी प्रार्थना के साथ मैं मेरा वक्तव्य पूर्ण करता हूँ।
जय स्वामिनारायण !'

यह है प.पू. काकाजी की दर्दभरी दास्तान !
मू.अ.मू. गुणातीतानंदस्वामी की बातों में लिखा है कि–
ऐसे स्वरूप कभी जाते ही नहीं, वे तो प्रगट ही रहते हैं। सो, आज भी प.पू. काकाजी हमें सुखी करने बैठे ही हैं.......
तो, **उनकी 'साक्षात्कार स्वर्णजयंती' के यज्ञ में**
हमारे पंचविषय के रमणीय राग, हमारी जड़ता, हमारे कई प्रकार के ज़नून,
हमारी व्यक्त-अव्यक्त छुपी महत्वकांक्षाएं, मान्यताएं, सत्यों, आदर्शों की आहुति देकर
उन्हें खूब प्रिय सुहृद्भाव, निर्दोषबुद्धि, मैत्रीभाव, आत्मीयता आदि शब्दों को केवल बोलने में ही ना रखते हुए
दिल की सच्चाई से वर्तन में लाकर,
भिन्न-भिन्न प्रवाहों में बंटे गुणातीत समाज की भावात्मक एकता प्रगटायें
और
'सुहृद्भाव का कलश' जो कि प.पू. काकाजी के ही शब्दों में–**'चढ़ाना बाकी रहा है'**
वह **चढ़ा कर** उनकी ख़्वाईश पूरी करें.......
हमारे बचपने, नादानियों, भोलेपन, अधिक सयानेपन के कारण
इतिहास को दोहराने की भूल अब ना करें !
यही कही जाए अक्षरधाम के इस शाही सौदागर की सच्ची **'साक्षात्कार स्वर्णजयंती'** मनाई !

✡✡✡✡✡

'मानकर काकाजी का वचन लाड़ले, कर दिया काकाजी को अमर...लाड़ले'

हम सभी के आनंदोत्सव का दिन यानि– हमारे प्यारे प.पू. गुरुजी की जयंती... इस वर्ष प.पू. गुरुजी 65वें वर्ष में पदार्पण करेंगे... और इस बार तो सोने में सुहागा जैसी बात हुई कि हमारे प्यारे प्रभु प.पू. काकाजी महाराज की साक्षात्कार स्वर्णजयंती का मंगलकारी वर्ष भी चल रहा है। सो, यह दोनों स्वर्ण अवसर हम सब मिलजुल कर 29,30,31 मार्च को 'ताड़देव' के प्रांगण में उल्लास व उमंग से मनाएंगे !

सर्वप्रथम तो भगवान स्वामिनारायण, प.पू. काकाजी व सभी गुणातीत स्वरूपों को अंतर से करोड़ों वंदन कि हम सब पर अकारण करूणा बरसाई और प.पू. गुरुजी के रुप में जैसे कि **प.पू. काकाजी कहते 'लीलो अनुग्रह'–वह** हम सब पर कर दिया है। दिल्ली–भारत की राजधानी कि जहां 'स्वामिनारायण' धर्म के बारे किसी को भी पता तक नहीं था, वहां पर 'साधु' के धर्म-नियम-मर्यादाएं संभालते हुए प.पू. काकाजी के वचन को अध्धर झेल कर अनथक् परिश्रम से प.पू. गुरुजी सत्संग के बगीचे की एक सेवक की भांति रखवाली कर रहे हैं।

प.पू. गुरुजी के बारे कुछ कहना, लिखना, बोलना, उन्हें समझना खूब कठिन है। वे हमारे ही लेवल पर आकर ऐसे वर्तते हैं कि हम भूलभुलैया में पड़ जाते हैं। अखंड प्रभु रखे हुए और साधुता की पराकाष्ठा पर होते हुए भी खूब ही सहज है उनका जीवन... हमारी कल्पना में

भी ना आए, ऐसी उनकी बेमिसाल सरलता, विनम्रता, भक्तिभरा दिल आज संबंध में आ रहे हर एक को छू जाता है।

प.पू. काकाजी के प्रति के प.पू. गुरुजी के लगाव, गुरुभक्ति, श्रद्धा, विश्वास का तो कोई छोर ही नहीं पा पाते। उनका रोम-रोम, उनकी एक-एक सांस, उनकी हर एक पल-पल की क्रिया मानो प.पू. काकाजी की ही 'हाश' प्राप्त करने ही जैसे तड़पती रहती है.....

प.पू. काकाजी के साक्षात्कार स्वर्णजयंती निमित्त फंक्शन के लिए गुजरात, पंजाब, मुंबई आदि से जो मुक्त दिल्ली पधारने वाले हैं, उन सबके ठहरने करने की व्यवस्था करनी थी। वह व्यवस्था तो सेवक लोग भी कर देते, पर प.पू. गुरुजी खुद धर्मशालाएं देखने गए... सब सुविधा वाली अच्छी धर्मशाला बुक कराई और यहां तक कि इंग्लिश टॉयलेट्स वगैरह कितने हैं, वो गिनती भी कराई। भक्तों को कोई तकलीफ ना पड़े, उस नज़रिये से सब कुछ खुद देखा... हमें विचार आया कि सच ! प.पू. गुरुजी हमारे लिए आज कितने सस्ते व गरजु बने है कि हमारी सुविधा के लिए वो टॉयलेट तक देखने जाएं। ऐसे सस्ते 'गुरु' कहीं किसी ने देखे हैं क्या ? भक्तों के प्रति गुरु की कैसी अनुपम भक्ति !!

प.पू. काकाजी के अमृतपर्व के समय 1994 में प.पू. गुरुजी लगभग एक महिने तक कई घंटों तक पुराने फोटोग्राफ्स के नेगेटीव्झ की आल्बम लेकर बैठे थे। एक-एक नेगेटीव को मेग्नीफाईंग ग्लास लेकर प.पू. काकाजी की भक्तों के साथ की पर्सनल मूर्तियाँ ढूंढ रहे थे... प.पू. गुरुजी की भावना ऐसी थी कि प.पू. काकाजी के अमृतपर्व व दिल्ली मंदिर की मूर्तिप्रतिष्ठा के समय सबको प.पू. काकाजी के साथ का पर्सनल फोटोग्राफ भेंट दूं जिससे कि सब भक्त प्रसन्न हो जाए... इस भावना से उन्होंने अत्यधिक परिश्रम किया।कैसी बेनमून गुरुभक्ति और भक्तों को प्रसन्न करके गुरु की मूर्ति लूट लेने की तमन्ना-चाहना !

प.पू. गुरुजी विचरण के लिए कहीं भी जाएं तो स्वाभाविक रात को सोने में भी लेट हो ही जाता है। फिर भी प.पू. गुरुजी सुबह जल्दी टॉयलेट जाकर जल्दी-जल्दी फ्रेश हो जाते हैं, जबकि हार्ट ऑप्रेशन के बाद मंदिर में सुबह फ्रेश होकर तैयार हो जाने में प.पू. गुरुजी अक्सर लेट हो जाते हैं। विचरण में एक दिन किसी भक्त ने पूछा कि–गुरुजी ! रात को इतना लेट सोए थे, फिर भी सुबह क्यों इतना जल्दी उठ गए ? तो प.पू. गुरुजी बोले कि जल्दी उठ कर मैं टॉयलेट जल्दी फ्री कर दूं, तो और सबको वह फ्री मिल सके। प.पू. गुरुजी की कही यह बात वहां बैठे सभी हरिभक्तों को भीतर तक स्पर्श कर गई कि सच में प.पू. गुरुजी कितने सामान्य बन कर छोटी-छोटी बातों का ख्याल रख कर, प्रेक्टीकल वे में हमारे साथ रसबस होते हैं ! बात खूब छोटी है, पर हमें खूब सिखा जाती है।

इसी संदर्भ में एक और प्रसंग याद आता है कि 2001 की मई की धून्य 7 मई से चालू हुई, तब गर्मी बहुत पड़ रही थी... सब जगह लाईट भी खूब जाती रहती थी। सो, प.पू. गुरुजी ने 12 मई 2001 की सुबह धून्य में सभी हरिभक्तों को कहा कि **आजकल लाईट खूब जाती है, रात को अगर घर पर लाईट ना हो तो गर्मी में सड़ते नहीं रहना, रात को सोने के लिए मंदिर आ जाना। मंदिर में बड़ा जनरेटर है, सो चार-पाँच घंटे तो आराम से सो पाओगे।** प.पू. गुरुजी की बात सुन कर कई भक्तों की आँख में पानी आ गया कि सच, प.पू. गुरुजी के दिल की भावना, भक्तों के प्रति की प्रीति... सब बेजोड़ है... कौन-सा गुरु स्थूल लेवल पर अपने भक्तों की इतनी छोटी-सी परेशानी को इतने अपनेपन से सोच सकता है !

दिल्ली में प.पू. काकाजी के संबंध वाले पुराने जोगी प.भ. दालिया साहेब को अचानक हार्ट का प्रॉब्लम आया और उनका बाईपास सर्जरी का आप्रेशन अमदावाद की 'कृष्णा अस्पताल' में कराना निश्चित हुआ। प.भ. दालिया साहेब थोड़े नर्वस हो गए थे। इस बारे प.पू. गुरुजी को ख्याल पड़ गया था, तो पहले तो 13 जनवरी 2001 की शाम को प.भ. दालिया साहेब को छोड़ने वे स्टेशन गए...

अमदावाद में आप्रेशन के लिए 19 जनवरी 2001 की तारीख निश्चित हुई... प.पू. गुरुजी फोन से तो दालिया साहेब के साथ रोज़ सम्पर्क में रह कर उन्हें हौंसला देते रहते थे... फिर भी वे 18 जनवरी की शाम की फ्लाईट से अमदावाद पहुँच ही गए ! ऍयरपोर्ट से सीधे अस्पताल ही गए... वहां प.भ. दालिया साहेब को मिले और सुबह फिर 7 बजे ऑप्रेशन के लिए ले जाने से पहले दालिया साहेब को मिलने गए... वहां बाहर सेवक के बताने पर कि सौ. नयनाबेन चिंतित बैठे दिखाई देते हैं, प.पू. गुरुजी ने अपनी माला नयनाबेन को भिजवाई और कहलवाया कि **इन्हें कहो कि वे माला फिराया करें और दालिया साहेब को जब दिल्ली वापिस ले आओ, तब मुझे मेरी माला वापिस भेज देना !** नयनाबेन ने खुद बताया कि प.पू. गुरुजी के यह माला देने व दो वाक्य बोलने से ही मुझे भीतर में एक अनोखी तसल्ली, शांति जैसी हो गई कि बस अब कुछ भी बिगड़ने वाला नहीं है।

प.पू. गुरुजी ने 'माला' के रुप में मुझे एक गारंटी मानो दे दी ! दालिया साहेब का ऑप्रेशन एकदम ठीक हो गया और रिकवरी भी बहुत जल्दी व अच्छी तरह हो गई ! भक्तों की कठिनाईयों में उनके साथ खड़े रह कर उन्हें बल में रखने वाले भक्तवत्सल 'साधु' यानि– प.पू. गुरुजी !

19 जनवरी 2001 की शाम को अमदावाद राजधानी से निकल कर 20 की सुबह दिल्ली आए... स्नान वगैरह करके तुरंत तैयार होकर पू. विशाल (जगरांव वाले प.भ. श्यामसुंदरजी के लड़के) का एपन्डीक्स का ऑप्रेशन हुआ था, सो उसे देखने 'महावीर अस्पताल' में गए। वहां से वापिस आकर दोपहर का खाना खाया और तुरंत पंजाब जाने के लिए निकल गए क्योंकि 21 जनवरी 2001 को पंजाब-जगरांव के प.भ. मनोहरलालजी की पुण्यतिथि में उन्हें शामिल होना था। प.भ. मनोहरलालजी यानि– प.पू. काकाजी के खूब पुराने जोगी–जो कि पंजाब में 'स्वामिनारायण' सत्संग ले जाने व वहां के विकास में निमित्त बने थे...

सभी भक्त प.पू. गुरुजी के इतने अधिक टाइट स्केडयूल को देख कर उनकी सेहत के बारे खूब चिंतित हो रहे थे। क्योंकि जनवरी के इन दिनों पंजाब में ठण्डी भी खूब होने के समाचार मिल रहे थे... पर आश्चर्य की बात थी कि 20 जनवरी व 21 जनवरी दोनों दिन मौसम बहुत ही अच्छा रहा। पंजाब के भक्तों ने भी यह बात नोट करी कि प.पू. गुरुजी के आने से पहले सुबह-शाम गहरा कोहरा पड़ता था और ठण्ड भी खूब थी। पर, प.पू. गुरुजी के आते ही कोहरा छँट गया और पूरा मौसम भी ठीक हो गया।

पंजाब के भक्तों ने यह बात प.पू. गुरुजी को सहज ही कही तो प.पू. गुरुजी बोले कि–

'हम अगर भक्तों के लिए दौड़ाभागी करते हैं, तो प्रभु ऐसे भी हमारी परवरिश करते हैं... मैं कई बार कहता हूँ कि भक्तों की सेवा के लिए हम यदि चक्कर काटेंगे, तो उस सेवा के फलस्वरूप प्रभु हमारे प्रारब्ध के चक्कर काट देंगे। हम एक भावना से प.भ. मनोहरलालजी के लिए पंजाब आए, तो महाराज ने हमारे लिए ठण्डी कम कर दी !'

आज गृहस्थ हो या साधक, छोटा हो या बड़ा, स्त्री हो या पुरुष... अपनी सहजता से उन्होंने हर एक के दिल में एक अलग स्थान बना लिया है... निम्न प्रसंग यह स्पष्ट बताता है।

पानीपत से प.भ. पुनीतजी प.पू. गुरुजी के दर्शन, सेवा-समागम के लिए हर शनिवार-रविवार को मंदिर आते हैं। उनके दोनों छोटे बच्चे-वैभव व ऋषभ भी साथ में आते हैं... इन बच्चों के सब दोस्तों को भी पता है कि शनिवार-रविवार को ये दिल्ली ही होंगे। मंदिर में चल रही प.पू. काकाजी के साक्षात्कार स्वर्णजयंती की चर्चा बच्चे सुनते रहते होंगे... फरवरी में लुधियाना में वे अपने किसी रिश्तेदार के यहां गए... वहां 30 मार्च को परिवार में किसी का जन्म दिन मनाने की तारीख बारे बात चल रही थी... वैभव एकदम बोल उठा कि **हम तो किसी भी हालत में आ ही नहीं सकते ना मम्मी ! क्योंकि 30 मार्च को तो अपने मंदिर में फंक्शन है...** वैभव के दिल में प.पू. गुरुजी कैसे बैठ गए होंगे ? आज नौ-दस साल के लड़के के दिल में प.पू. गुरुजी ने कैसा अपनापन महसूस कराया होगा ! उस बच्चे को तो अभी सत्संग की गहराई की भी क्या समझ ? उसे मंदिर में इतना अपनापन मिलता होगा, तभी तो फट् से यह वाक्य निकला...

प.पू. गुरुजी अपने स्वरूप को इतना अधिक ढक कर रखते हैं-छिपाने की खूब कोशिश करते हैं। पर, तब भी महाराज तो उनके स्वरूप का हमें दर्शन करा ही देते हैं... 10 जुलाई 1999 को प.भ. पुनीतजी का जन्म दिन था। पुनीतजी की दिल में खूब इच्छा थी कि वे किसी तरह सुबह ही प.पू. गुरुजी की 'पूजा' में पहुँच जाएं, पर संजोगवश वे पानीपत से निकल ही नहीं पाए और करीब एक बजे दोपहर को मंदिर आ पाए... आश्चर्य की बात यह बनी कि प.पू. गुरुजी एक बजे दोपहर को पूजा में बैठे थे ! सुबह से फोन वगैरह में खुद को व्यस्त रख कर, नहाने ना जाने का बहाना दिखाते रहे... जबकि आज तक उन्हें दोपहर एक बजे कभी भी किसी ने पूजा में बैठते नहीं देखा था। पर जब पुनीत भईया ने अपने मन का संकल्प बताया, तब उनका इस समय पूजा में बैठना सभी की समझ में आया। हम मानते हैं कि हम सत्पुरुष की मर्जी के मुताबिक वर्तते हैं, पर असल में ऐसे सत्पुरुष भक्तों के संकल्प के मुताबिक का जीवन जीते हैं।

ऐसा ही एक दूसरा प्रसंग–13 जुलाई 1999 को प.भ. अरविंद मेहताजी के दामाद प.भ. गगन को मिलने प.पू. गुरुजी अस्पताल गए थे। वहां से वापिस निकलते हुए गगन को पूछा कि तुम्हें सब खाने की छूट है ? तो गगन ने जवाब दिया कि हाँ ! फट् से, प.पू. गुरुजी बोले कि तो शाम को मैं तुम्हारे लिए बरगर भेजूँगा, तुम खाना खा नहीं लेना। गगन व उसकी मम्मी तथा सौ. बीनाभाभी (प.भ. मेहता सेठ की धर्मपत्नी) यह सुन कर बहुत आश्चर्य में रह गए, क्योंकि–उसी दिन दोपहर को ही गगन ने अपनी मम्मी को कहा था कि मम्मी बरगर खाने का मेरा मन हो रहा है पर, उसकी मम्मी ने मना कर दिया था कि अभी-अभी ताऊजी की मृत्यु हुई है, सो तला हुआ कुछ नहीं बन पाएगा। पर, तेरी सास को बना कर लाने कह दूंगी...

15 अगस्त 2001 और 16 अगस्त 2001 की रात को प.पू. गुरुजी ने कथावार्ता दौरान एक बहुत ही गहरी बात समझाई कि–

प.पू. काकाजी हम पर बहुत बड़ी जिम्मेदारी छोड़ कर गए हैं... हम सबको ऐसी कक्षा पर पहुँचना है कि यदि हम किसी से कोई सेवा लें, तो उसकी सेवा पू. काकाजी को पहुँचा पाएं... हमारा स्टेटस एकदम अलग है...

प.पू. गुरुजी की ये बातें सुन कर सभी को भीतर में हुआ कि ओहो ! संत हमें करुणा करके किस कक्षा पर ले जाना चाहते हैं ? और हम हैं कि अपने ही मन के

चक्करों और इन्द्रियों, अंतःकरण की वृत्तियों के भवंडरों में फंसे रह कर संत की हर क्रिया को नापते-तोलने में से ही बाहर नहीं आते ! असल में वे तो हमें राख के मूल्य पर सोना देना चाहते हैं पर हम...?

तो, प्रार्थना करें कि– जैसे कि महाराज नें कहा है कि राख धातुओं में सोना एक ही धातु ऐसी है, जिस पर छः ऋतुओं का कोई असर नहीं पड़ता। तो किसी भी वृत्ति, स्वभाव, प्रकृति, मन के भावों, हर्ष-शोक की अवस्थाओं, व्यक्ति, शक्ति, पदार्थ के ज्वार-भाटे साधु के साथ के हमारे संबंध में कभी प्रभाव ना डाल पाएं...

प.पू. काकाजी ने अपनी परावाणी में भी हमें कहा है कि– **'जो मुकुंद को राजी कर लेगा, उसके पास मैं समर्पित... बाकी सब को मैं अपने पास समर्पित कराता हूँ, पर जो मुकुंद के पास सरल रहेगा, उसके पास मैं समर्पित रहूँगा।'**

तो, हे गुरुजी ! प.पू. काकाजी ने तो हमें देने में कोई कसर नहीं छोड़ी। पर, अब आपको हम से जो कराना है... वो करने लग पड़ें। आपकी सामर्थ्य, असली साधुता, निरपेक्ष प्रेम के आपने इतने अनुभव हर प्रकार से कराए हैं, तो उन अनुभवों को दृढ़ता से पकड़े रख कर आपके स्वरूप को जैसा है वैसा तत्त्व से पहचान पाएं।

✡✡✡✡✡

'4 मई — प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी की जयंती का अनमोल अवसर...'

4 मई को गुरुहरि प.पू. योगीजी महाराज के पनौते मानस पुत्रों में से एक दिव्य धूमकेतु की यानि–प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी की जयंती का महामंगलकारी दिन है।

'कोई आत्मीय बने या ना बने, पर मुझे आत्मीय बनना ही है'–प.पू. स्वामिजी का यह एक सूत्र ही उनका अभिप्राय समझा जाता है। यही संदेश फैलाने के लिए आज देश-विदेश में अविरत विचरण करने का अथक परिश्रम वे ले रहे हैं। बापा का सूत्र **'युवक मेरा हृदय हैं...'** को नज़र में रखते हुए आज कलियुग में युवानों को संस्कार देकर भक्तिमार्ग की ओर निरंतर अग्रसर करने प्रयत्नशील हैं... इस प्रकार प.पू. स्वामिजी गुरुहरि योगीजी महाराज के कार्य को उठा कर गुरुभक्ति अदा कर रहे हैं। उनका वर्तन ही हम सभी के लिए आदर्श रुप है।

1956 में गुरुहरि योगीजी महाराज की 65वीं जयंती सारंगपुर में मनाई जा रही थी। सभी अपने-अपने हिस्से की सेवा में मशगूल थे... प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी तब युवक के रुप में थे, सो वे ध्वजा पताका बांधने की सेवा कर रहे थे। इतने में गुरुहरि योगीजी महाराज वहां से निकले और प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी के नज़दीक आकर बोले कि– **'गुरु ! भजन करते-करते हर क्रिया करनी, तो क्रिया बंधनरुप नहीं होगी।'** इतना कह कर बापा चले गए।

प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी तो तब सत्संग में नए-नए ही थे, पर बापा के साथ असाधारण लगाव-प्रीति थी; सो उसी पल दृढ़ गांठ बांध ली कि अब से जो भी क्रिया करनी, वह भजन करते-करते ही करनी है। प.पू. स्वामिजी इस प्रसंग को बताते हुए एक बार बोले थे कि फिर कभी दोबारा इस सूचन के लिए मैंने बापा को चान्स नहीं दिया ! इस छोटे से प्रसंग से स्पष्ट दर्शन होता है कि गुरु की आज्ञा की कैसी जाग्रतता ? उन्हें प्रसन्न करने की कैसी गरज– लगन ?

प.पू. स्वामिजी के अंतर में बस एक ही उमंग है कि संबंध में आए हुए सभी प्रभु के सच्चे सेवक बनने 'भुलका' की यात्रा पर अग्रसर होकर गुणातीत समाज में सभी के आत्मीय बनें। इसे गुरुहरि योगीजी महाराज कहते कि संप, सुहृद्भाव, एकता रखो... प.पू. काकाजी महाराज कहते कि मैत्रीभाव, सुहृद्भाव रखो ! प.पू. काकाजी तो यहां तक कहते कि सुहृद्भाव एकांतिकभाव से भी बढ़ कर है ! प.पू. पप्पाजी कहते हैं– 'भावात्मक एकता' ! सच में सभी गुणातीत स्वरूप की चाहना एक ही है, सिर्फ शब्दों का फर्क पड़ता है। पर, यदि निचोड़ निकालेंगे तो सभी में से एक ही सुर निकलता दिखाई पड़ेगा।

अभी दिसंबर 2001 में हरिधाम में स्वामिनारायण महामंत्र द्विशताब्दी खूब भव्य रुप से मनाई गई... कई संत शिरोमणि विभूतियाँ इस महोत्सव में आईं... प.पू. स्वामिजी की विनम्रता, साधुता, सर्वदेशियता, आदि तो हर एक को छू ही गई, पर-सबसे अधिक वर्तमानकाल में पतन की दिशा ओर जा रहे युवकों के जीवन परिवर्तन के प्रसंगों ने उन सभी महानुभावों को आश्चर्य में डाल दिया... प.पू. स्वामिजी का यह ऐश्वर्य, प्रतिभा उनकी ब्राह्मीशक्ति का सम्यक् परिचय दे जाता है...

तो, प.पू. स्वामिजी की जयंती पर प्रार्थना कि हे स्वामिजी ! आपने जो हमें 'भुलका' बनाने का संकल्प किया है, वह तो साकार होने ही वाला है; पर हम प्रसंगों की मार खाए बिना प्रभु को ही कर्ता-हर्ता व सर्वोपरि मान कर एक उनका ही आधार लेकर, हँसते-खेलते ही 'भुलका' की भूमिका को प्राप्त कर लें... इस हेतु आप हमें **भजन** करने का अमाप बल व बुद्धियोग देना !

❑

आइए...

प्रगट ब्रह्मस्वरूप प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी

एवं

भगवत्स्वरूप – प.पू. हरिभाई साहेब, प.पू. दिनकरभाई,

प.पू. कोठारीस्वामिजी (हरिधाम), प.पू. निर्मलस्वामिजी, प.पू. प्रेमस्वामिजी,

प.पू. विज्ञानस्वामिजी, प.पू. महेन्द्रबापु, प.पू. भरतभाई और संतों - मुक्तों की निश्रा में

29, 30, 31 मार्च 2002 – छुट्टी के ये तीन दिन उत्तर भारत के स्थानिक मुक्त एकत्रित होकर

ब्रह्मस्वरूप प.पू. काकाजी महाराज के साक्षात्कार की 'स्वर्णजयंती'

सुहृद्भाव का कलश चढ़ाने की सुरुचि से 'ज्ञानशिविर' के रुप में मनाएं

और

31 की सायं उनके मानस पुत्र प.पू. गुरुजी का 65 वां प्रागट्य दिन मना कर

प.पू. काकाजी के आंतर्हार्द पर अग्रसर होने का

शुभ संकल्प करके - प्रयास करके उनका परिश्रम यत्किंचित् सार्थक करें...

–योगी डिवाईन सोसाईटी, दिल्ली

व्रतोत्सवसूची

(1)	दि. 25.3.2002, सोमवार	–	एकादशी, व्रत
(2)	दि. 28.3.2002, गुरुवार	–	होली, ब्र. स्व. भगतजी महाराज का प्रागट्य दिन
(3)	दि. 29.3.2002, शुक्रवार	–	धुलेन्डी, प्र. ब्र. स्व. प.पू. साहेब का प्रागट्य दिन
(4)	दि. 31.3.2002, रविवार	–	प.पू. गुरुजी का प्रागट्य दिन सायं 5:30 से 9:00 'ताड़देव' में मनाएंगे
(5)	दि. 8.4.2002, सोमवार	–	एकादशी, व्रत
(6)	दि. 21.4.2002, रविवार	–	**रामनौमी, भगवान श्री स्वामिनारायण जयंती**, व्रत
(7)	दि. 23.4.2002, मंगलवार	–	एकादशी, व्रत
(8)	दि. 25.4.2002, गुरुवार	–	गुरुहरि प.पू. योगीजी महाराज का दीक्षा दिन
(9)	दि. 4.5.2002, शनिवार	–	प्र. ब्र. स्व. प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी की जन्म जयंती
(10)	दि. 8.5.2002, बुधवार	–	एकादशी, व्रत

Air Mail

'**Bhagwatkripa**' Bimonthly Magazine

Despatched on 15th of alternate months from January

If undelivered please return to :—

Printer, Publisher, Editor :—

SHRI PRABHAKAR RAO *FOR* YOGI DIVINE SOCIETY- DELHI

'Taddev', Kakaji Lane, Swaminarayan Marg,

Ashok Vihar-III, Delhi-110 052 (India) Tel.: 7229327, 7249327

Type Setting : **SHAYOKA Type Setting**

Rama Vihar, Delhi-110081 Phone: 5483035

Printed at : **Delux Offset Printers**

308/4, Shahzadabad, Opp. Rohtak Road, Daya Basti, Delhi

TO,